International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 25-02-2023, Accepted: 15-03-2023, Published: 30-03-2023
Volume 9, Issue 2, 2023, Page No. 31-34

सुशीला टाकभौरे की कहानियों में दलित चेतना

विनोद बाबुराव मेघशाम
सहायक प्राध्यापक, हिन्दी अध्ययन विभाग, क्रिस्तु जयंती महाविद्यालय (स्वायत्त) बेंगलूरू, कर्नाटक, भारत

सारांश
आजकल समाज में शिक्षा की बढोत्तरी को देखा तो इसका श्रेय डॉ. बाबासाहेब भीमराव आंबेडकर जी को जाता है। क्योंकि उन्होंने जो शिक्षा की बीज बोया था जिससे दलित समाज में उनके उन्नति का मार्ग प्रशस्त किया और बाबा साहब ने कहा था कि शिक्षा वह शेरनी का दूध है जो पीएगा दहाड़ेगा। उनका मानना था कि शिक्षा ही समाज में चेतना और जागृति ला सकती है। दलित साहित्य डॉ. बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर के क्रांतीकारी विचारों से प्रभावित हो कर हिन्दी साहित्य में दलित साहित्यकारों ने अपनी लेखनी के द्वारा दलितोंपर होनेवाले उच्चवर्णीयों के शोषण, अन्याय, जातिगत भेदभाव, कट्टर कुप्रथाओं के नाम सदियों से सामाजिक अपमान जैसे विषयों को अपनी लेखनी का विषय बनाकर उनकी भावनाओं तीव्ररूप देने का काम किया है। दलित साहित्य में सुशीला टाकभौरे की कहानियाँ आंबडेकर के विचारों से प्रेरित है। समाज में महिला रचनाकारों के जीवन व सृजन के बीच निरन्तर संघर्ष व युध्द की स्थिति ही बनी रहती है। वही आपको डॉ. सुशीला टाकभौरे हिंदी दलित साहित्य के सर्वश्रेष्ठ महिला साहित्यकारों में से एक जो अपनी कहानियों के माध्यम से दलित समाज की सामजिक, धार्मिक, आर्थिक, नैतिक और शैक्षिक स्थिति के चित्रण के साथ सवर्णों के द्वारा होनेवाले अन्याय अत्याचारों के प्रति अपने विद्रोह और परिवर्तनवादी विचारों को स्पष्ट किया है।

मूल शब्दः दलित साहित्य कार सुशीला टाकभौरे, दलित साहित्य की कहानियाँ, दलितों की स्थिति गति एवं शिक्षा का स्तर, शोषण के प्रति विद्रोह का स्वर, बाबा साहेब से विचारों से प्रेरित, दलितों में चेतना और संघटन की प्रेरणा, वैचारिक, मानदंड, सभ्य समाज।

मूल आलेख

हर युग में साहित्य समाज के हित, चिन्तन और चिन्ताओं को समझने का प्रतिबिंबन रहा है। साहित्य ही हमारे जीवन, समाज और नियति को समग्रता से देखने, जानने एवं समझने की दृष्टि से लैस करने की क्षमता रखता है। इसलिए इस सत्य का साक्षी बनकर खडा रहा है कि साहित्य के अभाव में समाज के पास ऐसी शक्ति या क्षमता नहीं जो उसे सही दिशा दे, उसके जीवन की प्रगतिशील परिधि निर्धारित करे और उसके जीवन के लक्ष्य को निरूपित करें। साहित्य समय और समाज से प्रभावित होकर, समय और समाज को प्रभावित करके युवचेतना की अभिव्यक्ति कर समाज को दिशा, दशा और संभवनाएँ प्रदान करता है। यह और भी गर्व की बात है कि हमारी इस रचनात्मक विरासत की सर्जन घर्मित को निरन्तर समृद्ध व विस्तृत करने में महिला लेखिकाओं ने भी अपूर्व योगदान दिया है। महिलाओं में संवेदनाओं का अतुलित खजाना होता है।

महिला रचनाकारों के जीवन व सृजन के बीच निरन्तर संघर्ष व युध्द की स्थिति ही बनी रहती है। इनका लेखन मन की कोरी उडान या केवल स्वांतः सुखाय जैसे मनोविनोद तक सिमित नहीं होकर असलियत की गाथा है, जिसका आधार जीवन के सजीव अनुभव हैं। लेकिन सजीव अनुभव का सृजन या चित्रण हिन्दी साहित्य में ज्यादातर दलित महिला का उल्लेख मिलता है। इन दलित महिलाओं में प्रसिद्ध दलित लेखिका सुशीला टाकभौरे एक है।

डॉ. सुशीला टाकभौरे हिंदी दलित साहित्य के सर्वश्रेष्ठ महिला साहित्यकारों में से एक जो अपनी कहानियों के माध्यम से दलित समाज की सामजिक, धार्मिक, आर्थिक, नैतिक और शैक्षिक स्थिति के चित्रण के साथ सवर्णों के द्वारा होनेवाले अन्याय अत्याचारों के प्रति अपने विद्रोह और परिवर्तनवादी विचारों को स्पष्ट किया है। सुशीला टाकभौरे दलित साहित्य की महत्वपूर्ण कवियित्री, लेखिका एवं विचारक हैं। उनके लेखन में साहित्य और समाज के बुनियादी सरोकारों पर बल दिखाई पड़ता है। सुशीला जी दलित समाज व स्त्री का उत्थान चाहती हैं। इनके साहित्य में दलित समाज, दलित स्त्री व हाशिए पर रहें लोगों का मार्मिक यथार्थ दृष्टिगत होता है। सुशीला जी के विचारों में दलित व स्त्री की समानता का स्वर दिखाई देता है। यथार्थ को प्रत्यक्ष रूप से अभिव्यक्ति करने में सुशीला जी सिद्धहस्त हैं।

दलित व स्त्री विमर्श के साहित्यकारों में सुशीला जी ने अपनी उपस्थिति दर्ज करवायी है। सुशीला जी का व्यक्तित्व बहुआयामी प्रतीभा और विलक्षणा से युक्त है। इनकी रचनाओं में "शिकंजे का दर्द, कविता संग्रह हमारे हिस्से का सूरज', 'तुमने उसे कब पहचाना, नाटक 'नंगा सत्य', 'रंग और व्यंग्य और कहानी संग्रह संघर्ष, टूटता वहम', 'अनुभूति के घेरे, उपन्यास – तुम्हें बदलना ही होगा आदि का विशेष महत्व है। सुशीला जी स्वयं दलित समाज से होने के कारण दलितों की व्यथा को नजदीक से देखा और भोगा है। यही कारण है कि इनके साहित्य में यथार्थ प्रकट हो सका है। सुशीला जी की यह विशेषता है कि वे दलित शोषित वर्ग प्रति सहानुभूति नहीं दिखाती बल्कि शोषण के विरुद्ध आवाज उठाने की संघर्ष करने की प्रेरणा देती है।

वर्तमान हिन्दी साहित्य में दलित साहित्य और साहित्यकार अपने क्रांतीकारी विचारों के द्वारा साहित्य के क्षेत्र में एक नई चेतना भरने का काम कर रहे हैं। दलित साहित्य डॉ. बाबासाहेब भीमराव अंबेडकर के क्रांतीकारी विचारों से प्रभावित हो कर हिन्दी साहित्य में दलित साहित्यकारों ने अपनी लेखनी के द्वारा दलितोंपर होनेवाले उच्चवर्णीयों के शोषण, अन्याय, जातिगत भेदभाव, कट्टर कुप्रथाओं के नाम सदियों से सामाजिक अपमान जैसे विषयों को अपनी लेखनी का विषय बनाकर उनकी भावनाओं तीव्ररूप देने का काम किया है।

डॉ.सुशीला टाकभौरे ने अपनी तीन कहानी संग्रह लिखी है वें बहुत प्रसिद्ध है। टूटता वहम', संघर्ष, 'अनुभूति के घेरे,। इस कहानी संग्रहों और साहित्य के वजह से वह आधुनिक दलित साहित्यकारों में प्रमुख स्थान प्राप्त कर चुकी है। उनकी कहानियाँ अंबेडकर विचार धारा से प्रेरित है। इनकी कहानियों में शोषकों से ही नहीं बल्कि अन्याय के खिलाफ़ मनोविश्लेषणात्मक, विद्रोहात्मक तथा आत्मकथात्मक है। इन्होंने अपने कहानियों द्वारा नारी मन के अंतद्वन्द और दलित समस्याओं को समाज के सम्मुख रखती है। सुशीला जी ने अपनी कहानियों में अपने विचार, अपने भाव और

जीवन की घटनाएँ के साथ अपने अनुभवों को प्रस्तुत किया है। इसके साथ–साथ इनके कहानियों में समाज में व्याप्त जातिभेद, शोषित, सामाजिक असमानता, सुवर्ण–अवर्ण तथा छुआ–छूत की भावना और दलित समुदाय के पिडित व्यक्ति द्वारा भोगे हुए अनुभवों का चित्रण किया है। इसके साथ ही उन्होंने अपनी रचनाओं में दलित समाज के बच्चे, बूढ़े, युवा–युवतियों, सभी वर्ग का प्रतिनिधित्व बड़ी क्षमता के साथ किया है। उनकी कहानियाँ यथार्थ के धरातल पर समाज का प्रतिनिधित्व करने के साथ दलित चेतना के विकास में भी सक्षम है। उनकी रचनाएँ स्वानुभूतियों का जीवंत दस्तावेज़ है। उन्होंने स्वयं सामाजिक विषमता का ज़हर पिया है, परिमाणतः दलित यातना से रू–ब–रू कराती उनकी रचनाएँ प्रबल आक्रोश के रूप में फूट पड़ती है। दबी–कुचली मानवीय संवेदना को आंदोलित करती है और उन्हें क्रान्ति की पहल द्वारा अपनी समस्याओं का समाधान तलाशने में प्रेरित करती है।

इनका कहानी संग्रह 'टूटता वहम' कहानी संग्रह में दलित और नारी जीवन से सम्बंधित समस्याएं हैं। नारी समस्याओं में दलित और अदलित नारियों की समस्याएं भी हैं। बाबा साहेब अम्बेडकर का नाम सम्पूर्ण दलित समाज के विकास और का केन्द्र बिन्दू रहा है। दलित नारी के उत्थान में भी बाबा साहब का काफी सहयोग रहा है। 'टूटता वहम' कहानी संग्रह में बाबा साहब के विचारों से प्रभावित दलितों की कहानियां हैं।

'टूटता वहम' कहानी संग्रह में पिछड़ी जाति से जुड़ी कहानिया है। सिलिया मुझे जवाब देना है, नयी राह की खोज, झरोखे, व्रत और व्रती, धूप से भी बड़ा, मन्दिर का लाभ, मेरा समाज आदि कहानिया संग्रहित है। सुशीला टाकभौरे ने इन कहानियों के माध्यम से आज के दौर में भी दलितों की क्या स्थिति–गति को भी उजागर किया है। दलितों को आज भी सवर्णों के सामने नीचा झुकना पड़ता है। यही हालात नारी के भी रहे हैं। दलित नारी को समाज की मनुवादी व्यवस्था से दो–चार होना पड़ रहा है। लेखिका का उद्देश्य यही रहा है कि दलित जातियां अम्बेडकरवादी विचारों को अपनाये और अपने स्वाभिमान का जीवन जीयें।

जिसमें दलित समाज के शैक्षणिक क्रांती और जीवन शैली के बदलाव के बाद भी जातीगत शोषण और भेदभाव आज भी समाज में प्रचलित है। इस 'टूटता वहम' कहानी संग्रह में जो कहानियाँ है इन कहानियों में पिछडि दलित जाति से जुड़ी कहानियाँ है। इन कहानियों से पता चलता है कि समाज इतना आगे बढ़ जाने के बाद भी जाति का दंश दलितों के लिए आज बना हुआ है कहानी के एक पात्र द्वारा स्वर्ण समाज के व्यवहारिक स्थिति का एक उदाहरण देख सकते है कि जैसे– "अब तो सब कुछ बदल रहा है, सवर्ण शूद्र के आपसी संबंध बदल रहे है, जो सवर्ण पहले छूने की कल्पना भी नही कर सकते थे वे अब शिक्षित सहकर्मी शूद्र अछूतों के हाथों में हाथ रखकर बातें करने लगे है।" इस वाक्य से पता चलता है कि दलितों की शैक्षणिक और जीवनशैली के बदलाव के बाद भी उच्चवर्णीय समाज का मानसिक रोग है जो आज भी मीटता नही है। जिस दिन इन उच्चवर्णीयों में मानासिक बदलाव होगा उसी दिन दलितों को सामाजिक गौरवपूर्ण सम्मान मिलेगा।

'जन्मदिन' कहानी में अपने देश के शहर से लेकर गांवों में व्याप्त दलित शोषण, छुआ–छूत, जाति–भेद के साथ–साथ सफ़ाई काम करनेवाला वर्ग एवं सदियों से करते हुए आए दलितों के कार्य इन सारे शोषित कर्मो से शोषित है, इस शोषित से बाहर लाने के लिए लेखिका पिछडे वर्ग को अंबेडकरवादी विचारधारा का संदेश पहुँचाकर उनमें जागृति, शिक्षा और परिवर्तन लाना ही इस कहानी का ध्येय समझती है। इस कहानी का पात्र 'मुन्ना' पंद्रह अगस्त का दिन समझकर इन सबको गंदगी साफ़ करने से मना करता है। इससे प्रेरणा पाकर सभी लोग 'हड़ताल' करने का निर्णय लेते हैं। मुन्ना इन सबका साथ लेता है और उनके मित्र विशाल कंबले से बाबा साहब के क्रांतीकारी विचारों का मार्गदर्शन और प्रेरणा पाकर इस संदर्भ में मुन्ना सोचने लगता है कि – "क्या गांधीजी हमारी जाति की पीड़ा को जानते थे?...तब उन्होंने हमारे लिए क्या किया? हमारे लोग तो अभी भी झाड़ू लगाने और मलमूत्र उठाने के काम कर रहे हैं। तब गाँधीजी ने हमे क्या दिया? हरिजन नाम देकर हमारा कौन सा उद्धार किया है?"2 इस संदर्भ में मुन्ना सभी सफाई कर्मचारी और शोषित लोगों को अंबेडकरवादी विचारों से जुडने की सलाह देते है।

'बदला' कहानी एक ऐसी घटना का यथार्थ चित्रण दर्शाती है जो उच्चवर्णीय समाज के लोगों की मानसीक बीमारी और उनकी दलितों के प्रति मानसिक द्वंद मनस्थिति का वास्तविक दर्शन कराती है। इस कहानी का मुख्य पात्र 'कल्लू' नामक लड़का स्कूल में पड़ता है। वह अपने सहपाठी सवर्ण बच्चों के साथ खेलता है। खेल–खेल में कल्लू का जीतना और उच्च जाति के लड़को का हमेशा हारना। भारतीय उच्चवर्णिय समाज की मानसिकता का चित्रण यह है कि समाज के नीचले वर्ग का युवक खेल में भी वह उन से हार जाए या उच्चवर्णियों का ही दबदबा बना रहे। दुसरों की जीत सह लेने की ताकत इनमें नहीं है। इसलिए वे उच्च जाति के लोग कल्लू से चिढ़ते हैं और उससे बदला लेने की योजना बनाते हैं। इसका परिणाम गाँव में उन लोगों के साथ दुर्व्यवहार, अपमान और अत्याचार जैसी घटनाएँ होती रहती हैं। घर के बड़े लोग उसे समझाने के बाद भी, वे उनका मज़ाक़ उड़ाने पर वह उसे मार देना और बाद में कल्लू की दादी और उसकी माँ उनसे हाथ जोड़कर क्षमा माँगते हैं। परंतु वे उन्हें जाति नाम जैसे भंगी की औलाद, अछूत, भिखारी, भिखमंगे आदि कहकर सामाजिक अपमान करने लगते हैं। उनके साथ आयी हुई उनकी मातायें भी 'जाती' शब्द के नाम पर उन्हें अपमानीत करती है। सवर्ण समाज के महिलाएँ तथा दलित समाज के महिलाओं का आत्मीयता सबंध था इस व्यवहार से आश्चर्य होता है। इस प्रकार के व्यवहार से छौआ माँ हकी–बक्की रह जाती है। उन्हे इन रघुवंशी स्त्रियों के साथ होली के अवसर पर गाँव के सत्रियों के साथ होली खेलना और अपने गाँव और वहाँ की स्त्रियों से प्रेम और अपनापन महसूस किया था। किंतु आज उन्हीं के मुँह से ऐसी बातें सुनकर उन्हें सच्छाई का पता चलता है कि उनमें छुआ–छूत और भेदभाव की भावना अभी भी है। इस प्रकार के द्वंद मानसिकता वाले उच्चवर्णीय लोग दलितों के जीतने पर भी अपमान अनुभव करनेवाले लोग, दलितों के सामाजिक बदलाव को स्विकार नही करते हैं। साथ ही दलितों का शोषण और नये–नये ढंग से समाज में अपमानीत करते है। ऐसे उच्चवर्णीयों के साथ सब मिलकर इस बदले को एकता के साथ लढने का एवं संघटन में परिवर्तित हो जाते है। दलितों में एकता देखकर सवर्ण घबरा जाते है। 'संघटन और संघर्ष' यही एक मंत्र है जो 'अन्याय और अत्याचार' के प्रति लढने की प्रेरणा देता है। इसी संदर्भ में छौआ माँ कहती है कि "अब हम किसी से नहीं डरेंगे। हम भी ईट का जवाब पत्थर से देंगे। वे शेर तो हम सवाशेर बनकर रहेंगे।"3 इस बदले की भावना से दलितों के उपर होते हुए अन्याय और शोषण के प्रति उच्चवर्णीयों के विरूद्ध संघर्ष करने और लढ़ने का मनोबल और प्रेरणा मिलती है। दलित समाज में इस संघर्ष की भावना से परिवर्तन और प्रगति के साथ एक सम्मानपूर्ण जीवन जीने की ओर अग्रसर होते है।

डॉ.सुशीला टाकभौरे ने नारी मन के अतंद्वंद्व के साथ दलितों के प्रति महाजनी लोंगों की मानसिकता का यथार्थ चित्रण, दलितों का विद्रोह का स्वर, दलित और सवर्णों के बीच का जातिभेद और उनकी मानसिकता, विचारों का भेदभाव, सामाजिक दूरी आदि ऐसी एक नही अनेक समस्याओं को समाज में प्रचलित घटनाओं को वास्तविकता के साथ दर्शाने का प्रयत्न 'चुभते दंश'

कहानी के माध्यम से किया हैं। इस कहानी की एक घटना ऐसी है कि छः दिसंबर के दिन 'भारतरत्न' बाबा साहेब अम्बेडकर का 'महापरिनिर्वाण दिन' 'समाजकल्याण शिक्षा संस्था' में मनाने और उनके विचारों समाज मुखी विचारोंपर चर्चा करना इसके लिए प्रमुख वक्ता डॉ.बाबा साहेब अबेडकर विचारधारा के मूर्धन्य विद्वान प्रोफेसर. मेश्राम जी को बनाया जाता है। वे एक दलित साहित्यकार के रूप में अपनी पहचान समाज में बनायें हुए है।

इस कार्यक्रम सारी जिम्मेदारी तक्षशिला बाघमोरे को दी गई है। उनके मन में यह भय होता है कि प्रोफेसर.मेश्राम जी कहीं दलितो के सामाजिक शोषण और उनकी पीड़ित वेदना के साथ, नाराज़ी से उच्चवर्णीयों के इस नीति के विरुद्ध कुट भाषण न दे। क्योंकि संस्था के प्राचार्य ब्राह्मण है। उन्हें किसी भी प्रकार से वह नाराज़ नहीं बनाना चाहती। लेकिन मेश्राम जो अपने भाषण में स्वभाविकता के साथ दलितों के सामाजिक यथार्थ को अपने भाषण में दलितों के दुःख, दर्द, अन्याय, अत्याचार का पर्दाफाश करता हुआ तीखी फटकार के साथ सारगर्भीत भाषण देते है। उसके बाद भी वहाँ एक शांतिपूर्ण परिस्थिति बनी हुई थी। संस्था के प्राचार्य ने भी संतुलित, सरल और सौम्य भाषण दिया। कार्यक्रम के समापन के बाद डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर के महापरिनिर्वाण दिन का आलोचना होती है। उच्चवर्णिय समाज के लोग कहते है कि ऐसे कार्यक्रम संस्था में आयोजित नहीं करना चाहिए। जो लोग अपने आपको समतावादी, समरसतावादी बताने के प्रचार–प्रसार के लिए ये तत्पर रहते है, वे ही उच्चवर्गीए लोग डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर के विचारों या उनका एक कार्यक्रम को सह लेने की ताकत नही रखते, लेकिन अपने आप को समतावादी बताते फिरते है। इनकी इस मानसिक स्थिति को देखकर तक्षशिला बाघमोरे को उनके खोखले समतावादी विचारों पर घिन और घृणा होने लगती है। ऐसी ही एक नहीं अनेक विचार आज के वर्तमान समाज में भी दिखायी देते है, इसी का चित्रण बहुत ही मार्मीकता के 'चुंभते दंश' इस कहानी में यर्थाथ रूप ये दर्शाया गया है।

'मेरा बचपन' कहानी के द्वारा समाज में व्याप्त छुआछूत जैसी समस्योंपर दृष्टिपात किया गया है। भारतीय हिन्दू समाज के सवर्ण महिलाओं की मानसिकता का ज्वलंत उदाहरण देखने को मिलता है। साथ में दशार्या है कि दलित समाज को शिक्षा से वंचित रखने का प्रयास और महिलाओं को सामाजिक रीति रिवाज़, रूढि परंपरा और अंधविश्वास जैसे कुविचारों से शिक्षा से दूर रखने के यर्थाथ घटनाओं को चित्रित किया है। जैसे गाँव के एक बडे बुजुर्ग यही कहते है– "लड़किया तो चिरैयों है, समय आते हि परदेश चली जाएगी"4 इस कथन के द्वारा महिलाओं के प्रति पुरूषों की मानसिकता को समझ सकते हैं। सवर्ण घरों में स्कुल से लौटे बच्चों पर घर के बाहर ही उनपर पानी डाला जाता है और उनके पहने हुए कपडे भी बदले दिए जाते है। वह सवर्ण महिला नाक भौं सिकोडकर कहती है कि–"न जाने कौन–कौन सी जात के बच्चों के साथ पढकर आतें है सबकी छुआ–छूत घर में लाते हैं।"5 इस से स्पष्ट होता है कि मेरा बचपन में गावों में छुआछूत जैसे सामाजिक कुप्रथा समाज में कैसे मानवियता का नाश करती है।

'मन्दिर का लाभ' कहानी में दलित समाज में व्याप्त अंधविश्वास और अंधश्रद्धा का रूप उजागर किया है। दलित समाज अपने जीवन शैली और अपने आवश्यकताओं पर, अपने बच्चों के शिक्षा पर पैसा खर्च करने के लिए कभी उतना उत्साहित नहीं होता जितना वह मन्दिर बनवाने के लिए करता है। अपना कष्ट और परिश्रम का सारा रूपया अपने भगवान पर रखी भक्तिपर निसंकोच रूप से सारी पूंजी खर्च कर देते हैं। दलितों को लेकर गांधीजी ने अछूत जातियों को हरिजन नाम दिया था और दलितों के मन में भी यह भावाना निमार्ण हुई की वह भी भगवान के जन हैं। हम भी भगवान की पूजा कर सकते हैं, मन्दिर भी बना सकते हैं, लेकिन सवर्ण समाज कभी दलित की इस भावना को समझ ही नहीं पाया। दलितों में ज्यादा भगवान पर विश्वास हैं और अपनी सारी जमापूंजी मन्दिर बनवाने में लगा देते हैं या अंधविश्वासी पद्धतियों का पालन करने अपनी पूँजी खर्च कर बैठते हैं। अगर भगवान पर पैसा खर्च करने पर उनका उद्धार होता, अगर दलितों में जागरूगता होती तो वह मन्दिर में जो पैसा लगाया वो समाज के कल्याण में या अपने बच्चों के शिक्षा में भी लगा सकते थे इसी प्रसंग से सम्बन्धित कहानी का पात्र कहता है कि –"जितना रूपया मन्दिर बनाने में खर्च हुआ, यदि यही रूपया समाज सुधार के काम में लगता तो दलित समाज का बहुत उद्धार होता।"6 भगवान के पूजा पाठ करने से अगर दलितों का उद्धार होता तो आज दलित समाज के लोग शिक्षा से वंचित ही नहीं रहते थे। यह सवर्ण समाज का एक बड़ा षड़यंत्र है। आपना जीवन अपनी मेहनत से चलता है न कि भगवान पर रूपया खर्च करने से। प्रस्तुत कहानी में दलितों की हिन्दू धर्म और भगवान पर होनेवाली आस्था का चित्रण है। वे मंदिर तो बनवाते है लेकिन समाज की स्थिति पर कभी विचार नही करते हैं।

'टूटता वहमः' कहानी सवर्ण समाज के सामाजिक और व्यवहारीक मानसिकता का यथार्थ चित्रण है। इस कहानी का मुख्य पात्र स्वयं लेखिका है। भारत जब स्वतंत्रता हुआ और उसके बाद दलित आंदोलन के उपरांत दलितों में जो जागृति, तथा विकास हुआ। उसका परिणाम, उनको शिक्षा के कारण सरकारी क्षेत्र में नौकरिया मिली। परंतु वर्ण व्यवस्था के इस कुप्रथाओं के कारण दलित नौकरों को अपने कार्य क्षेत्र जाति व्यवस्था का शोषण और अन्याय को सहन करना पड़ता है। इसका अनुभव स्वयं लेखिका है। जिनको एक प्रतिष्ठत कॉलेज में प्राध्यापिका पद मिल जाता है। प्रारंभ में कॉलेज के सभी उनके सहकर्मी बहुत ही आदर और सम्मान के साथ व्यवहार करते हैं। परंतु जब उनको लेखिका के जाति का पता चलता है तो उनके प्रति उनका व्यवहार बदल जाता है। जैसे एक अध्यापिका कहती है "मुझे तो प्राचार्य जी ने बताया, मैं तो विश्वास हि नहीं कर पायी, मुझे तो अभी भी विश्वास नही हो रहा है– आप ही बताओ क्या यह सच है?"३. लेखिका कहती है कि मैने ठहरे हुए अंदाज में कहा– "कौन सी बात मैडम?" "यही कि तुम एस.सी. हो।"7 इससे पता चलता है कि दलितों के शैक्षणिक और जीवन शैली के प्रगति पर सवर्ण समाज को किस तरह आश्चर्य होता है। दलितों के इस बदलाव को सवर्ण समाज पचा नहीं पाता। यह स्थिति आज के आधुनिक, उत्तर आधुनिक भारतीय समाज में दुसरे रूप में वर्ण व्यवस्था का रूप प्रचलित है। यह इस भारतीय समाज की सच्चाई है।

इन उपरोक्त कहानियों में लेखिका ने दलित समाज के शोषण, पिड़ा, अन्याय, जातिवाद के व्यवहार एवं विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों का चित्रण बहुत ही स्पष्टता के साथ चित्रित किया है। इसके साथ ही सुशीला टाकभौरे जी अपनी कहानियों के माध्यम से दलितों के सामाजिक शोषण एवं वर्ण व्यवस्था को मिटाने के साथ–साथ सवर्ण समाज के लोगों की हीन मानसिकता को यर्थाथ रूप से अपना साहित्य के माध्यम से ध्वनित करती है। उनके कहानियों की कथा दलित समाज को जागृति का संदेश देती है। डॉ. बाबा साहेब अंबेडकर के क्रांतीकारी विचारों का दलितों में प्रेरणा उत्पन्न करती है। इनके कहानी यों में दलितों के आत्मचेतना को प्रेरणा देती है और सवर्ण समाज के जातिवादी, कुविचारी, अंधविश्वास, रूढ़ि और संप्रदायीक विचारों के विरूद्ध जागृति की चेतना की झांकी है। दलितों की ध्वनि के प्रति रूप डॉ.सुशीला टाकभौरे है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. भूमिका (टुटता वहम) कहानी संग्रह–सुशीला टाकभौरे–114
2. समकालीन हिंदी कहानी एवं दलित विमर्श–डॉ मोहम्मदरफी एच हंचिनाल–विद्या प्रकाशन कानपूर 22 पृष्ट संख्या 80–वर्ष 2017
3. समकालीन हिंदी कहानी एवं दलित विमर्श दृडॉ मोहम्मदरफी एच हंचिनाल–विद्या प्रकाशन कानपूर 22 पृष्ट संख्या 81–वर्ष 2017
4. टूटता वहम मेरा बचपन–कहानी–सुशीला टाकभौरे 15
5. टूटता वहम मेरा बचपन–कहानी–सुशीला टाकभौरे 17
6. टूटता वहम (मंदिर का लाभ)–कहानी–सुशीला टाकभौरे 17
7. दलित कहानी समय और संवेदना–डॉ. देविदास बोर्डे – रोली प्रकाशन कानपुर–22 पृष्ठ संख्या 156